International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 1; January 2016; Page No. 56-59

मुक्तिबोध : एक अध्ययन

नीरजा सिंह

हिंदी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

13, नवम्बर 1917 को ग्वालियर (मध्यप्रदेश) के श्यौपुर, जिला मुरैना में माधवराव व पार्वतीबाई दम्पत्ति के यहां जन्मे गजानन माधव मुक्तिबोध बहुचर्चित कवि कहानीकार और समीक्षक के रूप में हिन्दी साहित्याकाश पर उदित हुए। गजानन माधव मक्तिबोध ने अपने जीवन के अल्पकाल में हिन्दी साहित्य को दीर्घकालीन अक्षुण्ण रचनायें प्रदान की। वे पत्रकार, प्रथम–तारसप्तक के साम्यवादी विचारधारा के प्रयोगशील कवि थे, जिनकी मान्यताएं किसी विशिष्ठ घोषणा–पत्र से बंधी न होकर अनुभव आधारित थीं। मुक्तिबोध अभावों और उपेक्षाओं में जिए। जीवन–भर उनसे संघर्ष करते रहे और हार नहीं मानी, उनके साहित्य में उनके जीवन की तस्वीर साफ दिखाई देती है। मुक्तिबोध का मानना था कि साहित्यिक कलाकार अपनी विधायक कल्पना द्वारा जीवन की पुर्नरचना करता है। मुक्तिबोध का विद्रोही, नूतनान्वेषी व्यक्तित्व छायावाद के निराला जी के व्यक्तित्व से स्पष्ट साम्य रखता है। मुक्तिबोध के काव्य में बौद्विक रोमानियत है। उनका साहित्य एक ऐसे अथाह सागर की भांति है, जिसके अर्थपूर्ण मोती पाने के लिए बार–बार सतह तक गोता लगाना होगा। 'एक साहित्यिक की डायरी' का एक छोटा सा अंश उद्धृत है–मुझे लगता है कि मन एक रहस्य लोक है। उसमें अंधेरा है। अंधेरे में सीढ़ियां है। सीढ़ियां गीली है, सबसे नीची सीढ़ी पानी में डूबी हुई है। वहां अथाह काला जल है। उस अथाह जल में स्वयं को ही डर लगता है। इस अथाह काले जल में कोई बैठा है, वह शायद मैं ही हूं।

हिन्दी साहित्य जगत के सर्वाधिक चर्चित और विवादित कवि, कथाकार, समीक्षक, निबन्ध लेखक व उपन्यासकार गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म 13 नवम्बर सन् 1917 ई. को ग्वालियर के निकट श्यौपुर, जिला मुरैना में हुआ। इनके पिता श्री माधवराव गोपालराव जी मुक्तिबोध (कुलकर्णी) सरकारी नौकरी पर पुलिस में सब इंस्पेक्टर थे। वे बेहद ईमानदार, निर्भीक एवं न्यायनिष्ठ थे। इनकी ईमानदारी ने उन्हें आर्थिक रूप से कभी फलने फुलने नहीं दिया। उनकी निडरता, न्यानिष्ठता का स्पष्ट प्रभाव उनके पुत्र पर भी पड़ा। इनकी पूज्य माता जी सौ. पार्वतीबाई माधवराज जी मुक्तिबोध 'ताई' के नाम से ही जानी जाती थी। चार भाईयों में मुक्तिबोध सबसे बड़े थे। अन्य भाईयों के नाम क्रमशः शरदचंद, बंसतराव और चन्द्रकांत थे। परिवार में साहित्यिक वातावरण मुक्तिबोध जी को विरासत में मिला। इनकी माताजी संतों के धार्मिक साहित्य से प्रभावित होकर अंभगादि रचा करती थीं। चाचा जी श्री कृष्णराव और बुआ श्रीमती भागुबाई देवास्कर व कृष्णाबाई कुलकर्णी आदि भी साहित्य लेखन से जुड़े थे। इनके द्वितीय बंधु श्री शरतचंद भी मराठी के जाने माने कवि, कथाकार, उपन्यासकार, समीक्षक एवं निबंधकार थे, जिनका मुक्तिबोध से भी पहले अल्पायु में ही देहांत हो गया था।

मुक्तिबोध जी का विवाह बसंत पंचमी के दिन सम्पन्न हुआ। इनकी पत्नी का भुभ नाम श्रीमती शांता गजानन मुक्तिबोध रहा। यह एक प्रेम–विवाह था, इस कारण मुक्तिबोध को पारिवारिक सदस्यों से संघर्ष करना पड़ा। मूलतः यह संघर्ष जातिवाद की कट्टरता और परिस्थितियों की असमानता से था। इससे पता चलता है कि मुक्तिबोध ने पारंपरिक रूढ़िवादिता के पाश से बंधना कभी स्वीकार नहीं किया। पिता की आर्थिक तंगी और बार–बार स्थानान्तरण के कारण मुक्तिबोध जी का विद्यार्थी जीवन भी अत्यन्त संघर्षपूर्ण रहा। मुरैना में जन्में मुक्तिबोध ने उज्जैन, विदिशा, इंदौर एवं नागपुर आदि स्थानों में अध्ययन किया। वे जाति से ऋग्वेदी ब्राह्मण थे और अत्री गोत्रीय थे। वे मूलतः मराठी थे किन्तु उनका बाल्यकाल हिंदी वातावरण में व्यतीत हुआ। उनकी शिक्षा दीक्षा मराठी और अंग्रजी भाषाओं में सम्पन्न हुई। 'नया खून' साप्ताहिक पत्र से जुड़े होने के कारण उर्दू से भी उनका परिचय हुआ। इस प्रकार मराठी, अंग्रेजी, हिन्दी और उर्दू इन चारों भाइयों का ज्ञान मुक्तिबोध जी को प्राप्त था। इन्होंने इंदौर से बी.ए. और नागपुर से एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। जब वे उज्जैन में अध्ययनरत थे, तभी से साहित्य लेख का श्रीगणेश हो चुका था। सन् 1935 से ही वे कवि कर्म से जुड़ गये। हिंदी के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि श्री माखनलाल चतुर्वेदी का महत्वपूर्ण प्रोत्साहन उन्हें प्राप्त हुआ। खंड़वा नगर से प्रकाशित 'कर्मवीर' साप्ताहिक पत्र के वे संपादक थे। उनके प्रोत्साहन ने मुक्तिबोध के अन्दर के कवि को प्रेरित किया। मुक्तिबोध ने यह स्वीकारा है कि राष्ट्रीय कवि श्री चतुर्वेदी जी का प्रथम प्रभाव उनकी कविताओं पर पड़ा, इसी आरंभिक कविकाल में श्री रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' की कविताओं से भी वे प्रभावित रहे।

मुक्तिबोध का जीवन संघर्षों एवं विरोधाभासों का पुलिंदा है। वे आधुनिक हिंदी साहित्य में ईमानदार लेखन और संघर्ष के प्रतीक है। पारिवारिक दायित्व को वहन करने के लिए उन्हें अनेक प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। इनकी आर्थिक स्थिति के भयावह रूप का अनुमान उनके इस उल्लेख से सहज ही लगाया जा सकता है। ''स्त्री मेरी अेबिल के पास खड़ी हुई है, किसी जमाने में जब वह छोटी थी और मैं भी छोटा था तो बड़ी आकर्षक थी। आज वह मुझे भयोत्पादक प्रतीत होती है। उसको देखकर मेरे हृदय में करूणा, दायित्व भाव, यथार्थ का आंतक और भय तरह–तरह की भावनाएं व्याप्त हो जाती है।''[1] परन्तु आर्थिक दबाव में आकर उन्होंने कभी अपने अन्दर के साहित्यकार से समझौता नहीं किया। डा. गौतम के इन शब्दों ने उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का खांचा खींच डाला है, ''मुक्तिबोध आत्मका, शरीर, विचार और व्यवहार से कवि थे। उनका संपूर्ण व्यक्तित्व काव्य था। नैतिकता और कलम की दृष्टि से वे सदा ईमानदार रहे। स्वार्थ से हटकर उन्होंने सदा त्यागव्रत अपनाया। स्वाभिमान उनका प्रमुख गुण था तथा वे कृज्ञता का दामन सदा थमे रहें। वे कभी भी समझौतावादी नहीं रहे तथा किसी भी लाभ पर अपने सिद्धान्तों की बलि नहीं चढ़ाई। पिता के साथ भी उनका सैद्वान्तिक विरोध रहा। उनका आंतरिक व्यक्तित्व स्वच्छ और सुलझा हुआ था। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में मुक्तिबोध को ट्यूबर्कुलर मेनिजाइटिस नामक बीमारी ने जकड़ लिया और जीवन के साथ–साथ मृत्यु से भी उनका संघर्ष आरम्भ हो गया। लगभग आठ महिने के संघर्ष में मृत्यु की विजय हुई और 11 सितम्बर सन् 1964 ई. को क्रांतिवीर का देहावसान हो गया।

एक साहित्यकार के रूप में अपने जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त

मुक्तिबोध की लेखनी निरन्तर कार्यरत रही। साहित्य जगत में अनकों धाराओं का उत्थान एवं अवसान होता रहा। छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता सभी ने मुक्तिबोध को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया परन्तु उनकी मान्यताएं किसी विशेष धारा से बंधी न होकर अनुभव आधारित रहीं। वे उन्मुक्त स्वभाव के थे, अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर किसी भी प्रकार का बन्धन उन्हें स्वीकार्य नहीं था। मुक्तिबोध मूलतः कवि थे। वे व्यवस्थित रूप से सर्वप्रथम सन् 1943 ई. में अज्ञेय द्वारा सम्पादित प्रथम तार सप्तक में प्रकाशित हुए। उनकी कविताओं का प्रथम संग्रह 'चांद का मुंह टेढ़ा है' सन् 1964 में प्रकाशित हुआ। श्री कान्त वर्मा जी के अथक प्रयासों से यह शुभ कार्य तब सम्पन्न हुआ, जब मुक्तिबोध अपनी प्राणघातक बीमारी से संघर्षरत अचेतनावस्था में थे। 'चांद का मुंह टेढ़ा है' कवित में छोटी बड़ी अट्ठाईस कविताएं संकलित है। मुक्तिबोध का भाव पटल अत्यन्त विस्तृत है भूल गलती, पता नहीं..... ..... ब्रह्ममराक्षस, लकड़ी का बना रावन, 'चांद का मुंह टेढ़ा है' मुझे कदम–कदम पर, मरे सहचर मित्र एक अन्तः कथा, चकमक की चिंगारियां, चम्बल की घाटी में, अंधेरे में आदि भिन्न शीर्षकों से संकलित कविताओं में एक विस्तृत भाव जगत के दर्शन होत हैं। इन कविताओं में युयुत्सा और संघर्ष के भाव अभिव्यंजित हुए है। त्रासदीमूलक इन रचनाओं में प्रतीकों के माध्यम से भय और आंतक का भव व्यक्त किया किया गया है। आज का मानव मूल्यबोध के अस्तित्व से दूर पाशविक वृत्ति के घेरे में घिरा क्रंदनमय जीवन जीने के लिए विवश है। 'भूल और गलती' नामक कविता में ऐसे ही भाव अभिव्यंजित हुए हैं –
सामने–

बैचेन घावों की अजब तिरछी लकीरों से कटा चेहरा
कि जिस पर काँप
दिल की भाप उठती है.....
पहने हथकड़ी वह एक ऊंचा कद
समूचे जिस्म पर लत्तर
झलकते लाल लंबे दाग
बहते खून के
वह कैद कर लाया गया ईमान।'[2]

सन् 1980 ई. में राजकमल प्रकाशन द्वारा इनका दूसरा काव्य संग्रह 'भूरी–भूरी खाक धूल' प्रकाशित किया गया। इसमें सहर्ष स्वीकारा, एक रंग का राग कायरता व साहस के बीच, ये आये वे आये, भाग गई जीप, ओ मसीहा, इसी बैलगाड़ी को, गुंथे तुमसे बिंधे तमसे, भूरी–भूरी खाक, धूल आदि लगभग सैतालिस कवितायें संकलित है। इन कविताओं में आज के उत्पीड़न भरे समाज को बदलने का आकुल आग्रह तथा जनसंघर्षों की निर्णायक स्थिति में अमानवीय व्यवस्था के कालान्तर द्वारा तोड़ डालने का दृढ़ संकल्प विस्मयकारी शक्ति के साथ अभिव्यक्त हुआ है।

''अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे।
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब
पहुंचना होगा दुर्गम पहाड़ों के उस पार
तब कहीं देखने मिलेंगी बांहे
जिनमें कि प्रतिपल कांपता रहता
अरूण कमल एक''[3]

मुक्तिबोध की सभी कविताओं में एक प्रक्रिया अनिवार्य रूप से घटित होती है वह है आत्मग्रस्तता से आत्म चेतस होने की स्थिति

''खोजता है पठार..... पहाड़..... समुन्दर
जहां मिल सके मुझे
मेरी वह खोयी हुई
परम अभिव्यक्ति अनिवार
आत्म संभव।''[4]

एक कवि के रूप में मुक्तिबोध विस्तृत कैनवास लिए हैं। उनकी हर इमेज के पीछे शक्ति होती है। स्थूल और सूक्ष्म दोनों के चित्रण में सर्वत्र एक अद्भुत स्पष्टता होती। उनकी कविताओं में सदैव एक साथीपन का भाव हे। उनके अन्दर मस्तिष्कहीन कोरी भावुकता नहीं है। उनके भावों के ज्वार के पीछे विचारों का दीर्घ दोहन है। ''मुक्तिबोध की कविता, अद्भुत संकेतों से भरी जिज्ञसाओं से अस्थिर कभी दूर से ही शोर मचाती, कभ कानों में चुपचाप राज की बातें कहती चलती है। हमारी बातें हमी को सुनाती हो और हम अपने को एकदम चकित होकर देखते हो, और पहले से कोई भी अधिक पहचानने लगते हो।'' मुक्तिबोध की कविताएं उनके व्यक्तित्व की झलक प्रस्तुत कर देती है। ''मुक्तिबोध की कविताएं उनका इतिहास है जो इन कविताओं को समझेंगे उन्हें मुक्तिबोध को किसी और रूप में समझाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।''[5] उनकी कविताओं में दुरूहता, जटिलता और क्लिष्टता सब जगह मिलती है, इसलिए सर्वसाधारण के लिए ये आंनदप्रद अथवा बोधगम्य नहीं कही जा सकती इसलिए शमशेर बहादुर सिंह कहते हैं कि मुक्तिबोध की कविता को किसी राजदां की बातों की तरह संभल–संभलकर सोच–सोचकर, बल्कि कभी–कभी दोहराकर पढ़ना चाहिए।[6]

कहानीकार के रूप में मुक्तिबोध के दो कहानी संग्रह प्रकाशित हुए प्रथम कहानी संग्रह 'काठ का सपना' सन् 1967 ई. में प्रकाशित हुआ जिसमें विपात्र, 'पक्षी और दीमक', काठ का सपना, क्लाड, ईथरली आदि कहानियां संग्रहित है। इनका दूसरा कहानी संग्रह 'सतह से उठता आदमी' सन् 1971 ई. में प्रकाशित हुआ, जिसमें जिन्दगी की कतरन, समझौता, आखेट, चाबुक, विद्रुप, भूत का उपहार, जलना, एक दाखिल दफ्तर, सांझ, सतह से उठता आदमी कहानियां सग्रहित है। मुक्तिबोध की कहानियों में उनका अपना जीवन संघर्ष अनेक रूपों में व्यक्त हुआ है। कविताओं की भांति कहानियों में भी मुक्तिबोध ने फैंतासी शिल्प का प्रयोग किया है। 'पक्षी और दीमक' कहानी में फैंटेसी के माध्यम से मनुष्य की अकर्मण्यता और तात्कालिक आत्मसंतुष्टि पाने की उत्सुकता से वास्तविक सुख से वंचित हो जाने का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। 'काठा का सपना' सामाजिक यथार्थता का उत्कृष्ट उदाहरण है। गरीब स्त्री के उपमान भी उसकी स्थिति के अनुरूप दिये गये हैं। ''उसे स्त्री के होंठ गुलाब की सूखी पंखुरियों से लगे, जिससे उसे सूरज की गरमी याद आई उसके कपोल मिट्टी से थे, भुसभुसी, नमकीन, शुष्क मृत्तिका।''[7] हालात से संघर्ष करते–करते स्त्री–पुरूष दोनों काठ से लट्ठे हो गये हैं जो बहे जा रहे है, आंखें में अपनी बेटी सरोज के सुन्दर भविष्य के अपने ''उन दो निष्प्राण काठ लट्ठों का यही कर्तव्य है।'' क्लॉड ईथरली एक ऐसी कहानी है, जिसमें इन्होंने अणुयुद्ध का विरोध करने वाली आत्मका की आवाज को क्लॉड ईथरली के रूप में प्रस्तुत किया और पूरी कहानी को अवचेतन के अंधेरे तहखाने में पड़ी हुई आत्मा के विद्रोह की कहानी बना दिया है। सतह से उठता आदमी की प्रथम कहानी 'जिन्दगी की कतरन' का केन्द्र बिन्दु आत्महत्या है जो डायरी शैली में लिखी गयी है। मुक्तिबोध की कहानियां दो पात्रों के बीच – एक स्वयं मुक्तिबोध और दूसरा मुक्तिबोध का सहयात्री एक अनन्त वार्तालाप है। वार्तालाप का यह क्रम न डायरी में टूटा, न उनकी कविताओं में। उनकी कहानियों का समग्र मूल्यांकन करते हुए मोतीराम वर्मा ने लिखा है ''कुल मिलाकर मुक्तिबोध की कहानियां साधारणजनों से

लेकर बुद्धिजीवियों तक और परिवार से लेकर मानव सभयता के प्रश्नों की छूती हुई अनेक जीवनानुभवों को विविध संदर्भों में प्रस्तुत करती है।''[8] कहानीकार के रूप में मुक्तिबोध की चर्चा कम हुइ है। कहानी के प्रचलित शिल्प से हटकर संस्मरण, वार्तालाप फैंतासी आदि के संश्लेष विश्लेष शिल्प में रचित होने के कारण ही मुक्तिबोध की कहानियों को अपेक्षित महत्व नहीं प्राप्त हो सका।

समीक्षक के रूप में मुक्तिबोध का साहित्य कम महत्वपूर्ण नहीं है, इनकी प्रथम समीक्षात्मक कृति कामायनीः एक पुनर्विचार सन् 1961 ई. में प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त नयी कविता का आत्मसंघर्ष (सन् 1964) नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र (1971) एक साहित्यिक की डायरी भी मुक्तिबोध की कालजयी समीक्षात्मक कृतियां हैं। एक साहित्यिक की डायरी 'वसुधा में प्रकाशित' उस स्तम्भ का नाम था, जिसके अन्तर्गत समय–समय पर मुक्तिबोध सामयिक टिप्पणियां लिखा करते थे। इन टिप्पणियों के विषय कभी अर्द्ध साहित्यिक कभी गैर साहित्यिक होते थे। ये टिप्पणियां स्वयं में स्वतन्त्र निबन्ध ही हुआ करते थे जो बाद में एक पुस्तक के रूप में संकलित किये गये। उनकी यह कृति विचार और शैली–शिल्प दोनों ही विशेषताओं से विभूषित है। प्रकाशक के कुछ शब्द उद्‌द्वत है– सीधा सादा प्रारंभ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्र से वार्तालाप, पर आदि से अंत तक भाव और स्वर डायरी का, उनकी यह कृति डायरी के एक नए और विशिष्ट प्रकार का श्रीगणेश करती है। इसमें कथा एकांकी, निबन्ध आदि अन्य विशेषताओं का समन्वय सा मिलता है। कवि उस डायरी में गंभीर चितंक, विचारक, समीक्षक ओर दार्शनिक बनकर हमारे समक्ष उपस्थित होता है। श्री अदीब के अनुसार ''मुक्तिबोध की डायरी उस सत्य की खोज है, जिसके आलोक में कवि अपने अनुभव को सार्वभौमिक अर्थ दे देता था।''[9] इसमें 13 प्रकरण समाविष्ट है। यह पुस्तक मुक्तिबोध के साहित्य को सही–सही समझने के लिए मार्गदर्शक का कार्य करती है। इसमें वर्णित प्रायः सभी पात्र कवि की कल्पना की उपज है, कवि के मन में उठने वाले प्रश्नों के उत्तर ढूंढने वाले उन्हीं के हृदय के विविध मानसपुत्र हैं।

मुक्तिबोध की 'कामायनी एक पुनर्विचार' प्रसाद की कामायनी को एक विराट फैंटेसी के रूप में व्याख्यायित करती है। कामायनी में प्रसाद की संवेदनात्मक प्रतिक्रियाएं फैंटेसी में प्रकट हुई है। मुक्तिबोध ने कामायनी का पुनर्मुल्यांकन सर्वाथा नवीन दृष्टिकोण से किया है। उन्होंने कामायनी के मिथकीय सन्दर्भ को समकालीन प्रासंगिकता से जोड़कर ऐतहासिक कार्य तो किया है। साथ ही कामायनी के प्रति सही समझ बढ़ाने की दिश में नई दृष्टि औरन नवीन वैचारिकता को भी जाग्रत किया है। इसमें मनु श्रदा और इड़ा जैसे पौराणिक पात्र अपनी परम्परागत ऐतहासिक सत्ता खोकर विशुद्ध मानव चरित्र के रूप में उभरते है। प्रसाद जी को सामायिक जीवन की समस्याओं के प्रति सजग बताकर मुक्तिबोध ने एक उदार एवं विवेकशील दृष्टिकोण का परिचय दिया है पर मनु और प्रसाद जी के जीवनदर्शन में मात्र सामन्तशाही वर्ग चेतना के दर्शन करके उन्होंने कामायनी के मानवतावादी आधार पटल की उपेक्षा की है। ''नयी कविता का आत्संघर्ष' में मुक्तिबोध ने युग की परिस्थितियों और उसमें कवि की स्थिति के परिपेक्ष्य में काव्य की सही दिश निर्धारण करने का प्रयास किया है, मुक्तिबोध नयी कविता को एक परिस्थिति के भीतर पलते हुए मानव हृदय के पर्सनल सिचुएशन की कविता मानते है। मुक्तिबोध लिखते है'' नई कविता वैविध्यमयी जीवन के प्रति आत्मचेतस व्यक्ति की प्रतिक्रिया है। नयी कविता में जीवन का कोई भी विषय अकाव्योचित नहीं माना जाता है। इसलिए मुक्तिबोध लिखते है–

मुझे कदम कदम पर
चौराहे मिलते है
बांहे फैलाये।
जीवन में आज के
लेखक की कठिनाई यह नहीं कि
कमी है विषयों की
वरन् यह कि अधिक्य उनका ही
उसको सताता है,
और वह ठीक चुनाव कर नहीं पाता है।[10]

''नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र'' ने हिन्दी साहित्य में आलोचना के नये पैमानों को तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। जनता का साहित्य किसे कहते हैं? शीर्षक आलेख में मुक्तिबोध जनधर्मी साहित्य की परिभाषा देते हुए कहते हैं– ''जनता का साहित्य का अर्थ जनता को तुरंत ही समझ में आने वाले साहित्य से हरगिज नहीं..... जनता का साहित्य का अर्थ जनता के लिए साहित्य से है। ऐसा साहित्य जो जनता के जीवन मूल्यों को, जनता के जीवनदर्शो को प्रतिष्ठापित करता हो उसे अपने मुक्ति पथ पर अग्रसर करता हो। अपनी इस समीक्षात्मक कृति में उन्होंने साहित्य, साहित्य की प्रासंगिकता, रचना प्रक्रिया प्रयोगवादी और नई कविता की प्रकृति, रचना की आवश्यकता और साहित्य के मार्क्सवाश्दी पहलू पर अपने नितांत मौलिक और वस्तुनिष्ठ नजरिये से विचार प्रस्तुत किये हैं।

मुक्तिबोध द्वारा रचित उपन्यास विपात्र यद्यपि उपन्यास के परंपरागत सिद्धान्तों की कसौटी पर खरा नहीं उतरता परन्तु यह उपन्यास विधा का नया मोड़ देने में सफल है। यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। घटनाओं को महत्व न देते हुए लेखक ने उद्देश्य और चरित्र पर अपनी दृष्टि केन्द्रित की है इस उपन्यास का प्रत्येक पात्र किसी न किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। इसका प्रमुख पात्र बॉस नायक या खलनायक पूंजीवाद का प्रतीय पात्र है। अन्य सभी पात्र बुद्धिजीवी वर्ग के मध्यम दर्जे के प्रतीक पात्र है। कथा की मूल वस्तु पूंजीवाद के शिकंजे में सामज किस तरह जकड़ा हुआ है इसका सूक्ष्म और मार्मिक दर्शन कराती है। इस उपन्यास में नारी पात्रों का अभाव है। यह उपन्यास विविध विधाओं का समन्वित रूप परिलक्षित होता है परन्तु इसमें लेखक अपने प्रगतिवादी उद्‌देश्य को सूक्ष्मता से स्पष्ट करने में सफल रहा है। मुक्तिबोध ने अनेक पत्र पत्रिकाओं में अपनी सक्रिय भूमिका निभायी हे। नागपुर में पत्रकारिता के व्यवसाय से उनका संबंध जुड़ा। स्व. श्री कृष्णनंद जी सोख्ता द्वारा संपादित साप्ताहिक नया खून में उन्होंने सर्वप्रथम उपसंपादक का काम किया। अनंतर वे नया खून के कुछ समय तक संपादक भी रहे। सन् 1945 में बनारस में ये त्रिलोचन शास्त्री के साथ हंस के सम्पादन में शामिल हुए। सन् 1946–47 ई. में जबलपुर आने के बाद दैनिक जयहिन्द में कुछ समय काम करते रहे। बसन्त पुराणिक के सम्पादन में 'समता' द्वैमासिक में प्रमुख योगदान दिया। जबलपुर से ही वसुधा में 'एक लेखक की डायरी' धारावाहिक रूप से निकलती रही। जिसमें मुक्तिबोध विभिन्न विषयों पर टिप्पणियां लिखत थे।

वस्तुतः मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के उन विरले प्रसिद्ध कवियों में है, जिन्होंने पारम्परिक साहित्यिक काव्य प्रयोगों और विचारों के स्थान पर अपनी मौलिक भूमिका का निर्माण किया। काव्य माध्यम के रूप में लम्बी कविता का चुनाव और फैंटेसी की परिकल्पना उनके मौलिक प्रयास है। उनके अनुसार ''अपने स्वयं के शिल्प का विकास केवल वही कवि कर सकता है, जिसके पास निज का कोई ऐसा मौलिक विशेष हो जो यह चाहता हो कि उसकी अभिव्यक्ति उसकी के मनस्वों के रंग की, उन्हीं के स्पर्श की और गंध की हो।'' 10 नयी कविता का आत्मसंघर्ष पृ. 61 उनका समस्त साहित्य एक संवेदनशील रचनाकार की मार्मिक अभिव्यक्ति है। विचारों को संवेदनाओं में और संवेदनाओं को चित्रों में परिणित करने की

अद्भुत क्षमता उनमें थी। वे काव्य में यथार्थ की पूर्ण, अभिव्यक्ति आवश्यक मानते थे। 'काव्यः एक सांस्कृतिक प्रक्रिया' निबन्ध में उन्होंने लिखा है, ''कवि ह्रदय आज के जगत के मूल द्वंदों का अध्ययन करे अर्थात् अपनी सम्पूर्ण चेतना द्वारा आज की वास्तविकता की तह में घुसे और ऐसी विश्व दृष्टि का विकास करें जिसमें व्यापक जीवन जगत की तह में घुसे और ऐसी विश्व दृष्टि का विकास करें, जिसमें व्यापक जीवन जगत की व्याख्या हो सके।''[11] नयी कविता का आत्मसंघर्ष पृ.–22 छोटी कविताएं उन्हें अधूरी लगती थीं क्योंकि उनमें अभिव्यक्ति के चित्रणात्मक विकास को पूर्ण अवसर व क्षेत्र नहीं मिल पाता। मुक्तिबोध की समस्त रचना प्रक्रिया फैंटेसी शिल्प पर आधारित है। मुक्तिबोध ने कला के तीन क्षण बताये है पहला क्षण है जीवन का उत्कृष्ट तीव्र अनुभव क्षण जो मानसिक प्रक्रिया को आत्माभिव्यक्ति की और ले जाता है। दूसरा क्षण है अनुभव का फैंटेसी में परिवर्तित हो जाना। फैंटेसी व स्थिति है जब कवि की अनुभूति वैयक्तिक न रहकर निवैयक्तिक हो जाती है। इस प्रक्रिया में फैंटेसी एक नवीन रूप ग्रहण कर लेती है जो वास्तविक अनुभव से सर्वथा भिन्न होती है। इस प्रकार ''फैंटेसी अनुभव की कन्या है और उस कन्या का अपना स्वतन्त्र विकास मान व्यक्तित्व है'' कला का तीसरा क्षण वह है जब फैंटसी को शब्दबद्ध किया जाता है और वह कृति का रूप धाश्रण करती है शिल्प की दृष्टि से फैंटेसी एक ऐसा माध्यम है, जिसमें बिम्बों और प्रतीकों की सहायता से वातावरण का निर्माण किया जाता है और रचनाकार अपनी बात को सीधी न कहकर काल्पनिक कथा के माध्यम से कहता है। फ्रॉयड फैंटेसी को दिवास्पप्न मानते है जिसका निर्माण असन्तुष्ट व्यक्ति ही करते है। फैंटेसी के सन्दर्भ में मुक्तिबोध ने भोक्तृत्व और दर्शत्व के द्वन्द्व का एक समन्वय में लीन होने की बात की है, जो साधारणीकरण की नयी व्याख्या सी प्रतीत होती है। मुक्तिबोध ने पारम्परिक प्रतीकों के स्थान पर नवीन प्रतिकों का विधान किया है। 'चांद का मुंह टेढ़ा है' उनकी फैंटेसी व नवीन प्रतीक विधान का उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें चांद पूंजीवाद का प्रतीक है।

मुक्तिबोध ने विभिन्न शैलियों के माध्यम से व्यक्ति के मन और उसके जीवन का यथार्थवादी चित्र उपस्थित किया है। वे भाषा के प्रति नितांत सजग और संवेदनशील रहे है। कथ्य के आत्मसंघर्ष के समानांतर वे अभिव्यक्ति संघर्ष से भी जूझ रहे थे। अपनी सामाजिक चेतना को प्रमाणित और ईमानदार बनाकर प्रस्तुत करने की प्रक्रिया में उन्होंने भाषा के अभिजात्य को तोड़ा है अंग्रेजी, उर्दू, मराठी, तत्सम, तद्भव विदेशज देशज शब्दों की सहायता से अभिव्यक्ति उनकी मौलिकता का परिचायक है। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार ''मुक्तिबोध की प्राणवान् काव्यभाषा उनके प्राणवान कथ्य की प्रतिध्वनि है।'' मुक्तिबोध जितने प्रखर कवि है उतने ही प्रबुद्ध विचारक भी है। अपनी समीक्षात्मक कृतियों में वे काव्य रचना प्रक्रिया एवं काव्य सौन्दर्य के बदलते प्रतिमानों की चर्चा करते हैं। प्रगतिशील समीक्षा को नई कविता के सन्दर्भ में सार्थक बनाने का कार्य मुक्तिबोध ने औरों से कही बेहतर किया है। नामवर सिंह की नयी कविता सम्बन्धी अनेक मान्यताओं पर मुक्तिबोध का प्रभाव स्पष्ट है। उन्होंने प्रगतिवादी चिन्तक की भांति विशुद्ध आर्थिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि पर ही साहित्य समीक्षा का समर्थन नहीं किया वरन् साहित्य के सृजनात्मक और मनौवैज्ञानिक तथ्यों का भी आकलन आवश्यक माना है। वे साहित्यकार की चेतना का भी सम्यक् अवलोकन आवश्यक मानते है जो कला का मूल उत्स है। उनका मानना है कि साहित्यिक कलाकार अपनी विधायक कल्पना द्वारा जीवन की पुर्नरचना करता है। आलोचक को वे साहित्य का दरोगा मानते हैं। मुक्तिबोध ने भक्ति आंदोलन का नये सिरे से मुल्यांकन किया और स्थापित किया कि वह मूलतः निचली जातियों का विद्रोह था।

मुक्तिबोध एक कवि, कथाकार विचारक और समीक्षक के रूप में हिन्दी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षकर है, जिन्होंने अपनी मौलिक कल्पना विधायनी शक्ति से साहित्य में नयी प्रस्थापनायें कायम की। उनमें प्रेमचंद की सी सहजता एवं निश्छलता और निराला की भांति वे संघर्षशील विद्रोही एवं नूतनान्वेषी व्यक्तित्व के धारक है। वे सच्चे मानवतावादी साहित्यकार है। उनका वैचारिक अन्तर्द्वन्द उनके मानवतावादी दृष्टिकोण का ही प्रतीक है। वे स्वयं को मानवता की कसौटी पर कसते रहते है। उनके इस भंयकर द्वन्द के परिणामस्वरूप उनके काव्य में दुर्बोधता व दुरूहता का समावेश हो गया। उनकी प्रचंड सर्जनात्मक ऊर्जा से ओतप्रोत उनका साहित्य मन को झकझोर देता है। यही कारण है कि मृत्यु के वर्षों बाद आज भी मुक्तिबोध हिन्दी के सर्वाधिक चर्चित कवि है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एक साहित्यिक की डायरी (एक लम्बी कविता का अंत) पृ. 32
2. चांद का मुंह टेढ़ा है – गजानन माधव मुक्तिबोध, पृ. 32
3. चांद का मुंह टेढ़ा है – गजानन माधव मुक्तिबेध, पृ. 29
4. भूरी–भूरी खाक धूल (काव्य संग्रह) गजानन माधव मुक्तिबोध
5. चांद का मुंह टेढ़ा है – गजानन माधव मुक्तिबोध, पृ. 20
6. काठ का सपना (कहानी) गजानन माधव मुक्तिबोध
7. मुक्तिबोध का गद्य साहित्य – मोतीराम वर्मा, पृ. 64
8. एक साहित्यिक की डायरी – गजानन माधव मुक्तिबोध, पृ.
9. चांद का मुंह टेढ़ा है – गजानन माधव मुक्तिबोध,
10. नयी कविता का आत्सषर्घ – गजानन माधव मुक्ताबोध, पृ. 61
11. नयी कविता का आत्सषर्घ – गजानन माधव मुक्ताबोध, पृ. 20
12. प्रगतिवादी काव्य साहित्य – डॉ. कृष्णलाल हंस
13. मुक्तिबोध का रचना संसार – डॉ. शिवशंकर लधवे